

‘उमरावजान-अदा’ इति उर्दू-उपन्यासस्य श्वेतकेतुकृतः संस्कृतानुवादः

प्रभुनाथ द्विवेदी

पूर्वपीठिका

दरम्यान् मई-जून, 2017 ई० की बात होगी। पार्श्वनाथ-विद्यापीठ (वाराणसी) में ‘प्राकृत-भाषा एवं साहित्य’ सीखने-सिखाने की कार्यशाला लगी थी। इस बीच (अपने छात्र-जीवन से अध्यापक और शोधी-जीवन जीने के बीच) मुझे प्राकृत-भाषा का मरम समझ आ गया था। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के अन्तस्तल तक पहुँचने के इस राह हमने कभी क्रदम न धरे; यह बात कचोटी रहती। सूचना मिलते ही बतौर ‘छात्र’ दाखिला लिया और प्राकृत के पाठ शुरू हुए। 21 दिन की कार्यशाला थी। हर दिन एक ‘स्पेशल लेक्चर’ प्राकृत-साहित्य पर नियत था। श्रद्धेय स्वर्गीय प्रभुनाथ द्विवेदी जी ‘प्राकृत-कथाओं’ के शिल्प, विन्यास, भाषा और रचनाधर्मिता पर प्रायः बुलाए जाते थे। एक दिन ख़्याल यह आया कि ‘क्यों न अपनी हठधर्मिता छोड़ द्विवेदी जी को ‘उमराव जान अदा’ की संस्कृत-प्रति भेंट की जाए! आखिर बचपन से हितैषी रहे हैं और गाहे-बगाहे रचनात्मकता की ओर उन्मुख किए रहते हैं।’

बात यह थी कि इससे चार-छह महीने पहले ही मैंने मिर्जा मोहम्मद हादी रस्खा के विश्रुत उर्दू उपन्यास ‘उमराव जान अदा’ का संस्कृत-अनुवाद पूरा किया था और प्रकाशित प्रतियाँ; योग्य पाठकों का मुँह बाए इन्तजार कर रही थीं। जिन लोगों का प्रभुनाथ जी से परिचय हो उन्हें तो नहीं, लेकिन जो नहीं जानते; जान लें कि आप समकालीन संस्कृत-कथा-लेखकों की अगली पङ्क्ति में आते थे। सो ऐसे कथा-लेखक को ‘उमराव-जान-अदा’ की संस्कृत-काया से अपरिचित रखना अच्छा न मालूम हुआ। एक दिन इस ख़्याल से कि सब न देखें और तमाशा न बने; एक प्रति उठाई और उसे ‘गिफ्ट-पैक’ के कागज से लपेट, पैकेट बना लिया। नियत समय पर जब द्विवेदी जी ने अपना ‘क्लास’ पूरा किया और शाम को अवकाश हो गया, मैंने चुपके से यह कहते कि - ‘किसी लेखक ने यह किताब आप तक पहुँचाने को मुझे दिया था’; पैकेट उनके हाथ रख दी। अब जो देखता हूँ कि पैकेट् यहीं खोला चाहते हैं तो मैंने हाथ जोड़ा कि घर जा कर खोलिएगा। अब जिद पकड़ बैठे कि ‘भाई किताब मेरी है तो खोलने दीजिए!’... बारे कितनी मिन्तों के बाद इस पर राजी हुए और सबके सामने किताब खोलने की बला टली। रात के नौ बजे फोन किया और मारे खुशी फूले न समा रहे थे कि एक अच्छी रचना, एक अच्छा अनुवाद उन्हें पढ़ने को मिला। फिर वादा किया कि पूरी किताब पढ़ कर चर्चा करेंगे। महीना भर पढ़ते रहे और बीच-बीच में फोन कर मुझे साधुवाद दिया किए। एक महीने बाद घर बुलाया और अनुवाद की भारी-भरकम प्रशंसा के बाद दो पन्ने मुझे देते हुए यह कहा कि “अन्यथा न लीजिएगा। यह दो पृष्ठों की समीक्षा इस अनुवाद पर मैंने लिख दी है। अक्षम हूँ इसलिए इसे ‘संस्कृत-प्रतिभा’ तक पोस्ट करने की जहमत आप पर डाल रहा हूँ। कृपया इसे पोस्ट कर दीजिएगा।”

मैंने पत्रे ले लिए और घर लाकर रख दिए। सोचता रहा कि “मेरी प्रकृति जानते हुए भी द्विवेदी जी ने मेरी ही पुस्तक की समीक्षा मुझे क्यों दी?” भेजना था तो स्वयं भेज देते। पोस्ट के लिए मुझे क्यों दिया? क्या यह मुझ पर अनुकम्पा, कृपा या अनुग्रह का भाव जतलाने का उपक्रम है? पर वह तो जानते हैं कि ऐसे किसी उपक्रम की प्रतिक्रिया मेरी ओर से क्या होगी! फिर यह क्या है?”.... इसी तरह की कुण्ठा में डूबते-उतराते महीनों और आखिरकार साल बीत गया। फिर वह दिन भी आया कि यह दो पत्रे फाइलों के बण्डल में गुम हो गए। पिछले महीने किसी दिन की शाम के बक्त अचानक एक फाइल से यह पत्रे फिर से झाँक उठे और सारी स्मृतियाँ तरो ताजा हो गईं। दिलो दिमाग पर पता नहीं क्या असर तारी हुआ कि इसे मंजरे आम तक लाने की सूझी। भला हो ‘प्रलकीर्ति’ के विद्वान् सम्पादकों का कि आपने इसे इस लायक समझा और द्विवेदी जी की हस्त-लिखित सामग्री को यथावत् स्कैन कर छापने की मंशा जाहिर की। श्रद्धेय स्वर्गीय द्विवेदी जी की आत्मा से क्षमा का अभ्यर्थी-

श्वेतकेतु- वाराणसी

समीक्षा

अद्भुतोऽयम् उर्दू-उपन्यासस्ततोऽपि विलक्षणोऽस्यैषः संस्कृतानुवादः । एकत इमं संस्कृतानुवादं निपुणमध्येमि, अपरतोऽनुवाद सहदयमित्रं श्वेतकेतुं (मूलं नाम डॉ० प्रतापकुमारमिश्रम) स्थिथमनुस्मरामि । द्वयोर्मध्ये यदनुभवामि ततु किञ्चिदनिर्वचनीयमेव क्र मिर्जा-‘रस्वा’-विरचित उर्दू-भाषया विश्वविख्यात उपन्यासः (क्र चात्यन्तं सङ्क्षेपशीलो युवजनः श्वेतकेतुः संस्कृतोद्यानस्य नवकिसलयः । उर्दूभाषया सह मे मनागपि परिचयो नास्ति । केचन सन्ति संस्कृतज्ञा बहुभाषाविदो ये फारसी-अरबी-उर्दू भाषामपि जानान्ति तेष्वेवायं श्वेतकेतुरपि, अन्यथा तादृशमुर्दूभाषाविचितं तमुपन्यासं कथं हस्तामलकवत्परिचिनोति । उपन्यासस्यास्यैष अनुवाद एव व्यनक्ति श्वेतकेतोर्गहनं गभीरमध्यवयमपि चानुवादकर्म प्रति लगनं नैष्ठिकं च समर्पणम् । मन्ये, अनुवादकर्मणि निरतस्यानुरक्तस्य तस्य क्षुतिपासे अपि विस्मृते स्याताम् । अहो, तन्मयतैव प्रतिफलिता प्रसूतिः ।

अस्येव ‘उमराव-जान-अदा’ नाम कश्चिद् विशिष्ट उपन्यास प्रकार संवादप्रसारः । अधुना यः साक्षात्कारात्मको विधिरथवा, आत्मकथापरः प्रकारः संवादानां स एव पुज्जीभूतविषयरूपो विघटनघटनन्यास उपन्यासः । अत्रोपन्यासे ‘उमराव-जान’ अस्ति नायिका नायको वा प्रमुखं चरित्रम् । नेदं क्वचिकाल्पनिकं चरित्रम् । उपन्यासकुतो ‘मिर्जा-रस्वा’-महोदयस्य मनश्चिन्तिताः प्रश्ना मुखाद्बहिरायाताः समुद्घाटयन्ति उमराव-जान इत्यस्या जीवनपटस्यैकैकं तन्तुजातम् । तदानीन्तनस्योच्चवर्गीयानां मुस्लिमजनानां कालानुरोधप्रवृत्तं वृत्तं विशदं निरूपयत्येष उपन्यासः । अपि च, किं किं न करोति कारयति च नियतिः? तस्या रहस्यं को विज्ञातुमर्हति? केवलम् ‘उमराव-जान’-सदृक्षा जना एव येषामुपरि पतति प्रहारस्तस्याः । कथं काचिद् बालिकाऽपहता गणिकानां प्रकोष्ठं नीयते विक्रीयते? अपि च तत्र तस्याः का गतिरविगणण्य मतिं विमति वा, पुत्तलिकानर्तनमिवानभीप्सितं नूतनं जीवनं, नियतिचक्रभ्रमणमेव भाग्यमित्येतत्सर्वं साधु विशदयति मधुरविषमरणं वृत्तमिदं पटुरुचिररचना वल्लुवचनाऽफल्कुलना ।

डॉ० प्रभुनाथ द्विवेदी

पूर्व आचार्य, संस्कृत विभाग

Dr. Prabhu Nath Dwivedi

Ex.-Professor, Dept. of Sanskrit

पत्रांक/Letter No.:

Play Letter No.

੧੧

महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,

वाराणसी - 221002 (भारत)

MAHATMA GANDHI KASHI VIDYAPITH

VARANASI-221002

दिनांक (Date) : 15

दिनांक/Date : १६ जुलाई, २०१७.

३ तासु वदः

अद्युपोऽयम् उद्दी-उपत्यासस्तोऽपि विलक्षणोऽस्यैवः संस्कृतान् तादः । एषत
इमें संस्कृतात्मवादे निषुप्तमाध्येये, अपरोडुन्वादकं सहृदयामि मैं श्वेतकेरुं (मूलनाम
हौं) प्रतपृष्ठमध्येयम् (अप्यगमनुस्मारामि) । द्वयोऽस्मिंप्ये यदनुभवामि ततु किञ्चिद-
विभवत्त्वमेव । क्वचिज्जर्णलता विरचित उद्गुभाषणा विश्वविद्यापात्र उपायासः, क्वचि
वायन्ते स इच्छशरीले युवतीः श्वेतकेरुं संस्कृतोदयानन्दवक्तिस्ततः । उद्गु-
भाषणा सहौं मनसामये परिचयो नास्ति । क्वचन उन्हीं संस्कृतार्थ बहुपादविद्या ये
ज्ञारस्ती-उद्गुभाषु-उद्गुभाषा आपात्मा ज्ञानात्मा तेजोवाये श्वेतकेरुलिपि, अन्यथा तारु-
शमुद्गुभाषादिवरचित्तं तसुपन्यासं कथं इत्तमलक्षवत्पत्रेचित्तं नोति । उपन्या-
सस्यस्मृत्यैव उन्होंने श्वेतकेरुं तर्गहृनं गभीरमध्यवृथमपि चानु-
वादकर्म उत्तम लग्नं भैरविकृं च समर्पिणम् । मन्ये, उन्होंनाकर्माति निरतस्या-
मुद्गुभाष्यतस्य क्षुण्येषासे अपि विस्तृते स्थानाम् । अहो, तन्मयोरैव प्रतिप-
लित प्रसुद्धिः ।

अहस्ये त 'उम्रावजन अंदा' नाम कश्चिद् विशिष्ट उपन्यासप्रकार
स्वैवाप्यस्तः । अधुना यः साक्षात्कारात्मको विभिन्नता, उपलब्धापरः
प्रकारः संबद्धान् स रस प्रज्ञापूर्विषेषप्रदर्शयो विच्छन्नप्रज्ञन्नासि उपन्यासः
अत्रप्राप्यामास उप्रावजन एती नायिका नापते त्रयस्तु नरेत्रम् । तेऽन्ते
क्षमत्वालप्तिनिकृचरित्रम् । उपन्यासप्रकारो मित्राकृत्वस्वरूपाणां विद्यये मनस्तितिः ।
प्रदेशान् सुपूर्वद्वारापातः समुद्धापाते उम्रावजन इत्यस्य वीजनप्रस्ते
कैक्यं वृत्तजागतः । तदानीन्दनस्याच्चक्रमात्मा सुरुलिमतानन् कालावृत्तिप्रवृत्तं
वृत्तं विशद्दं निरपेययोग्ये उपन्यासः । अपि च, किं देह न करोति कर्मयाते म
नियमितः ? तथा रहस्यं क्षे विज्ञप्तुमहेतु ? केवलम् उम्रावजनसदृक्षा जना
र एव वेध्यमापात पताति प्रहृष्टतत्त्वाः ।

त तर तस्याः का ग्रन्थिरपेक्ष्य श्रुते विमितं दा, प्रत्यक्षिकानन्तै जिगानभीसि-
तं श्रुत्वा जो बन्धनं, निपत्तिक्षणमग्निप्रद भयमित्यर्थं स्थूलं तिक्ष्यते
मधुरादिविष्टं वृत्तासां पद्मताचरसवना वल्यत्वचना फलग्रन्थलक्षा ।

दुर्घट खल स्वयंकरता रुद्गादकलापाठ तु लिलक्षणमन्त्रितरसाधपूर्णम्
कर्तुं तीव्रलासन लग्नेभवलम् इष्टगणगणाध्यासेन च । उभराव जन्म अर्था-
इष्टप्रभुपन्यासेहम् इद्युग्मावत् यदस्य संस्कृताशुद्धपम् महान् यज्ञतो
विद्वितः संस्कृतोर्ध्वं कला श्वेतकुटुम्बा । प्रथमतत्त्वार्थीधौं पालि । सेष्य-
हेतु नगलीदाबादीति विशेषः संस्कृतद्वाज्ञ प्रार्थितः । दिनुं संस्ति-
नयं स्वकीयमसामर्थ्यमित्पर्य, “रत्नद्विशिष्टे रार्थं भवते व युवराज्ञैः
विद्युत्तमाभ्याम्” इति प्रति वचनं विशेषं निरेष्टद्विष्टमञ्जुं श्वेतकुटुम्बाभा-
प्यकृतवद् । तस्यानेत वचनस्त्रिविशेषः सास्त्रितं स्वीकारकारु नियोगाग्रिमं
धरीरो ग्रामीरो द्वुगुद्वीरोऽवेतकेतुः । श्वेतप्रभाम् कृतुम् । ततो महान् प्रय-
नेत उद्दीपातो जग्न्मना ५५त्प्रसा द्वृत्त तद्यग्नीकावृत् तत्त्वोऽधीत्य
मनसा एन्द्रपूर्णं संयोज्यमानुवादकर्त्तव्ये पापूरोत्तम् । यत्प्र

आवास : डी 65/421 पी एन 2, निर्मल नगर, फुलवरिया मार्ग, लहरतारा, वाराणसी - 221002 (भारत)
Resi. D 65/421 PN-2, Nirmal Nagar, Fulwaria Road, Lahertara, Varanasi-221002
Tel: 98110 80790/915, Mob: +91 98110 80790/915

प्रियबन्धोश्शेतकेतोरनुवादकलापाटवं तु विलक्षणमनितरसाधारणम्। दुष्करं खलु सुकरं कृतमनेन भीष्मप्रतिज्ञेन शिवसङ्कल्पेन संस्कृतमुपकर्तुं तीव्रलालसेन स्वमेधाबलेन दृढानुरागेण्यासेन च। ‘उमराव-जान-अदा’ इत्यमुपन्यासोऽस्मै ईटग्रोचते यदस्य संस्कृतानुवादाय महान् प्रयत्नो विहितः संस्कृतोर्धकेतुना श्वेतकेतुना। प्रथममेतत्कार्यार्थं पण्डित-सैव्यद-हसैन-मलीहाबादीति विशिष्टः संस्कृत विद्वान् प्रार्थितः।

डॉ प्रभुनाथ द्विवेदी

पूर्व आचार्य, संस्कृत विभाग

Dr. Prabhu Nath Dwivedi

Ex.-Professor, Dept. of Sanskrit

पत्राङ्क/Letter No.

॥श्री॥

(2)

महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी - 221002 (भारत)
MAHATMA GANDHI KASHI VIDYAPITH
VARANASI-221002

दिनांक/Date :

यस्मिन् सर्वे रमेते स तदेव से देते' इति नितान्ते व्यावहारिकं तथम्
चरिता थर्थतः नीपमनस्य जगापस्प प्रसाप्तः 'उमरावजान' इत्यल्प अथ
कदा विजलिता संस्कृतभाष्यर तदनुवादसोमाग्रये समापने ते कश्यद्य-
तुगानिकः स तर्ही इत्य निरन्तरं तद्वाचो विसर्तुं नाहृति स्म। अथेता दुर्शी
काञ्चिद्विभिन्नाऽनुवादस्मृष्टिः संस्कृतसाहित्यक्षेत्रे सरसामृतवृष्टिरितं
समाप्तिरिते मदेया अर्थाः।

ब्रह्मवादक्रमे यत्काञ्चिन्मनुभृतं ततु स्पष्टीकृतमनुवादवृत्तात त्रिलोक-
मध्ये भूमिकामौः। वर्तते स तत्काञ्चिन्मृद्युर्विषयोः प्रकृतिर्भवन्त्य-
कारस्त्रादेव। तत्र उद्दीभाष्यम् शब्दाः, विद्यापदिति तेषांच ब्रह्माणो व्यद-
हारो वाऽप्य च संकायत्वरणे अपुमाण अभाणदः; कथं तत्र संस्कृते
तथैवाच्छ्रव्यक्तः स्युपरिति समस्पर्श-पदे-पदे व्याजाननो हि संचक्षुतप्यद-
उर्व तिष्ठते। किन्तु सा स्त्री श्वेतकेतुर्ह साध्य वसाप्य सुरुद्धि द्याप्तिता
उपर्याख्ये तत्र तत्र यो ग्रन्तलग्नीतो त्रिव्युत्स्फृतस्मानि तत्सामाप्ति
यथोच्चित् व्यान्दो वृक्षाऽनुवादः 'जट्टुः। अन्तस्पृष्ट भूमिकारामनुवृत्त-
कृत स्वीयेऽनुवादप्रविष्ट्यर्थति विशदीकृतः। श्वलं लिंगक स्य मित्रोऽनुस्व-
मोदेव्यस्य शब्दप्रयोगान् (यथा- शुआ, मुरी, नि-गोड्मार, नि-गोडा। नि-
गोडी, अमौ, म्याँ - - - - - , अर्बे) संहितेऽनुवादते त्रिव्युत्स्फृतपदानि त्रिव्युत्स्फृत-
संहितान्मुक्तान् शब्दानामध्यवृत्तप्रवृत्तमनुवादते विषये इति मध्य तथा
त्रयतीर्त्तः। कवचित्पृष्ठपाते अपुमाण मूल(डृढ़े) श्वेत्य अनुवादे यथावत्
रेता विजितः। अस्माभ्याणः व्याल्पमनुवादः। अत्र दिशादे दर्पणे प्रतीते-
दिव्य इति स्पष्टमालक्षते श्वेतकेतुः स्तरास्त्रव्यक्तमः, तस्य निष्ठा, तस्य
विषयप्रयत्नं प्रभान् द्वा। नि-च्छुचम्पमत्वाद्य श्वलय इति हिं क्षिपते।
पाचके संहृत्येत्य तस्यामृद्ध अत्यनुभूते नयाते स्थापयत्तेयत्र लिख एव
मित्री रुख्याऽप्यभास्तु व्याप्तिर्भूतान्मणि श्वेतकेतुर्विरुद्धान्ते। कवच्याचतु-
संष्ठुक्तस्य स्त्रफलत्यात्मदस्तीतदेव वैशिष्ट्यम्। श्वेतकेतु वै-भूमि-
लालिका शुआमनुवादते विवृद्धप्रवृत्तम् सम्याप्ता इत्यन्त त्रिव्युत्स्फृतपदानि
स्पष्टते शुआनीपात इन्दोः कलङ्क इड र्बनशोभाद्य इति मन्ये।

अत्यं तावद् विस्तरेण। इहैं अर्थात् — "विलक्षणाऽपानुवादः।
स्तरावस्त्रस्प माहेसा यो न मे संस्कृतानुवादं पातेष्ये समाप्ताति" ति ॥

श्वेतकेतुनिपत्याऽस्ति रुची रुच्याय यशस्विनी।
यथा सुष्टुप्तुवादोऽयमका जानोन्मरावदः॥
श्वेतकेतुस्तु भूमिकारामनुवादते यथावत्।
एन्या संस्कृतसेमार्पि उद्योगम ततः परम्॥
पठन् सुविषयः सद्य संस्कृतस्तु र्वन्नज्ञायाः।
मित्रोऽनुवादात् यथा श्वेतकेतुः जसादतः॥
अनुवादमित्रं दृष्टव कस्य मीदो न पायन्ते।
प्रसन्नते मया किञ्चित्तिज्जालेन लक्ष्मीं व्रवेत्॥

॥ इति शम् ॥

आवास : फी 65/421 पी एन 2, निर्मल नगर, फुलवरिया मार्ग, लहरतारा, वाराणसी - 221002 (भारत)
Resi. D 65/421 PN-2, Nirmal Nagar, Fulwaria Road, Lahartara, Varanasi-221002
Tel.: 0542-2373815, Mob. No.: (O) 9415291980, email : dr.p.n.dwivedi@gmail.com

किन्तु स सविनयं स्वकीयमसामर्थ्यमभिधाय "एतद्विशिष्टं कार्यं भवतैव युवसंस्कृतविदुषा
सम्भाव्यत" इति प्रतिवचनं विधाय निवेदकममुं श्वेतकेतुमेवाधिकृतवान्। तस्यानेन वचसा
विस्मितः सस्मितं स्वीचकार नियोगमिमं धीरो गभीरोऽनुवादवीरः श्वेतकेतुः श्वेतश्यामं कर्तुम्।
ततो महता प्रयत्नेन उर्द्ध-भाषा सर्वात्मनाऽत्मसाकृत्वा तद्विषिकावृतं तत्त्वोऽधीत्य मनसा
स्थिरं संयोज्यानुवादकर्मणि व्यापुतोऽभूत्। यस्य यस्मिन्मनो रमते स तदेव सेवते' इति नितान्तं
व्यावहारिकं तथ्यं चरितार्थतां नीयमानस्य प्रतापस्य प्रतापतः 'उमराव जान' इत्यस्य अदा

कदा विगलिता संस्कृतभाषया तदनुवादसौभाग्यं समापत्वेति कश्चिदानुमानिकः सतर्कोऽपि निरस्ततर्को विज्ञातुं नार्हति स्म। अथैतादृशी काचिदभिनवाऽनुवादसृष्टिः संस्कृतसाहित्यक्षेत्रे सरसामृतवृष्टिरिव समापत्तिरेति मदीया मतिः।

अनुवादक्रमे यत्काठिन्यमनुभूतं ततु स्पष्टीकृतनुवादकृता तत्राऽङ्गलमय्यां भूमिकायाम्। वस्तुत एतल्काठिन्यं द्वयोर्भाषियोः प्रकृतिभिन्नत्वकारणादेव। तत्र उर्दूभाषायाः शब्दाः, क्रियापदानि तेषां व्यवहारो वा अथ च संवादसरणौ प्रयुक्ता आभाणकाः कथं तत्र संस्कृते तथैवाभिव्यक्ताः स्युरिति समस्या पदे पदे व्यात्ताननो हिंस्त्रचतुष्पद इव तिष्ठति। किन्तु सा सर्वा श्वेतकेतुना साध्यवसायं सुषु पाधिता। उपन्यासे तत्र तत्र या गजलगीतयो विन्यस्तास्सन्ति तासामपि यथोचितं छन्दोबद्धोऽनुवादः प्रस्तुतः। ग्रन्थस्य भूमिकायामनुवादकृता स्वीयोऽनुवादप्रविधिरपि विशदीकृतः। मूल लेखकय्य ‘मिर्ज़ारुस्वा’-महोदयस्य शब्दप्रयोगान् (यथा - मुआ, मूजी, निगोड़मार, निगोड़ा, निगोड़ी, अमाँ, म्याँ, बे, अबे) सङ्केतयताऽनेनोक्तमेव यदेतेषां सहजप्रयुक्तानां शब्दानामर्थसंरक्षणपूर्वकमनुवादो विधेय इति मया तथा प्रयतितम्। क्वचित्तून्यासे प्रयुक्ता मूल-(उर्दू)-शब्दा अनुवादे यथावत् समायोजिताः। असाधारणः खल्व्यमनुवादः। अत्र विशदे दर्पणे प्रतिबिम्ब इव स्पष्टमालक्षते श्वेतकेतोः सारस्वतश्रमः, तस्य निष्ठा, विषयलयनं लगनं वा। निश्चप्रचमयमनुवादो मूलस्य प्रतीतिं कारयति, पाठकं सहृदयं तस्यामेव भावभूमौ नयति, स्थापयति च यत्र लेखको ‘मिर्ज़ा-रुस्वा’ अथवाऽनुवादकशिरोमणिः श्वेतकेतुर्विराजते। कस्यचित् सार्थकस्य सफलस्यानुवादस्यैतदेव वैशिष्ट्यम्। अनुवादे ये येऽभिलिष्टा गुणास्तेऽत्र विशदतया सम्प्राप्ता इत्यत्र न कोऽपि सन्देहलेशः। चेल्काचिव्यूनता सर्वथा दोषैकट्टिष्ठिया सूक्ष्मान्वेषणत आविष्कृता साऽपि गुणसन्निपाते इन्दोः कलङ्क इव रचनाशोभायै इति मन्ये।

अलं तावद् विस्तरेण। अहं ब्रवीमि विलक्षणोऽयमनुवादः। एतावानस्य महिमा यो न मे संख्यानुमानपरिधौ समायातीति-

श्वेतकेतोर्नमस्याऽस्ति रुची रम्या यशस्विनी।
यया सृष्टोऽनुवादोऽयमदाजानोमरावतः॥
श्वेतकेतुस्तु धन्योऽस्ति धन्यस्तस्य श्रमो महान्।
धन्या संस्कृतसेवापि उर्दू-प्रेम ततः परम्॥
पठन्तु सुधियः सर्वे संस्कृतज्ञा रसप्रियाः।
मिर्ज़ा-रुस्वा-कृतं ग्रन्थं श्वेतकेतोः प्रसादतः॥
अनुवादमिमं दृष्ट्वा कस्य मोदो न जायते।
प्रसन्नेन मया किञ्चिल्लिखितं तच्छुभं भवेत्॥
इति शम्॥
चैत्र शुक्ल द्वितीया 2074 विक्रमी

16 April, 2017